P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-II * Issue-X*June-2015

शरत चन्द्र के साहित्य की प्रासंगिकता

रणजीत कुमार सिन्हा
प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
खड़गपुर कॉलेज,
खड़गपुर, पश्चिम मेदिनीपुर

सारांश

साहित्य की प्रासंगिकता इस बात पर निर्भर करता है कि वर्तमान समय में कितना सफल है, शरतचन्द्र ग्राम–बंग्ला के कथा शिल्पी है, इनके साहित्य आज स्वतन्त्र भारत के समाज में प्रसंगिक है, कारण समाज में बदलाव होता रहता है, पर आजादो के बाद भी ग्रामीण बंग्ला समाज में जो घटित हो रहा है वह शरत के कथा में कई दशक पहले मौजूद है।

मुख्य शब्द : नारी स्वतंत्रता, सांस्कृतिक मूल्य बोध, शिक्षा और नारी स्वाधीनता।

प्रस्तावना

बांग्ला साहित्य में शरतचन्द्र का आगमन एक महत्वपूर्ण घटना है। शरत चन्द्र का साहित्य कर्म अपने मामा के घर भागलपुर से शुरू होता है। बहुत ही दयनीय हालत में शरत चन्द्र का बचपन बीता है। राजेन्द्र कॉलेज के द्वारा आयोजित एक संगोष्ठी में शरत बाबू एक बार बोले थे "मेरा भी एक सपना था, आप लोगों की तरह उच्च शिक्षा ग्रहण करूंगा। मैं भी शिक्षालय में इसी सपने को लेकर दाखिल हुआ था, लेकिन विराट सपना मेरे परिवार की हालत के समक्ष चकनाचूर हो गया। विद्यालय को दूर से प्रणाम करके एक बंजारा की तरह निकल पड़ा।"[1]

फिर लीलारानी गंगोपाध्याय को एक पत्र लिखकर अपने परिवार की हालत के बारे में बताते हुए कहते हैं – ''बड़ा ही दरिद्र था। 20 रुपए के चलते परीक्षा तक नहीं दे सका। कारण मेरे परिवार के पास बीस रुपए भी देने की हालत न थी। मैं तो भगवान से बार–बार हाथ जोड़कर विनती भी करता था कि हे भगवान ! मुझे दो–चार दिन तक बुखार हो जाए तो फिर खाने की चिंता से मुक्त हो जाऊँ शरत चन्द्र का बचपन और किशोरावस्था अति दयनीय हालात में बीता है।[2]

शरत चन्द्र के समय भारतवर्ष अंग्रेजी हुकूमत के अंदर था। शरत चंद्र ने देश में हो रहे विप्लव को सही राह दिखाने के लिए ''पथेर दाबी'' (पथ के दावेदार) उपन्यास की रचना करते हैं। गांधीर जी की अनुनय–विनय नीति से देश की स्वाधीनता आन्दोलन को काफी हानि पहुँची थी। ''पथेर दाबी'' उपन्यास में शरत चन्द्र देश क क्रांतिकारियों को एक दिशा प्रदान करते हैं। वे पथ के दावेदार ''पथेर दाबी'' में सव्यसाची से कहलाते हैं – ''सभी धर्म असत्य है।[3] आदिम युगीन कुसंस्कार एवं विश्वमानवता का इससे बड़ा शत्रु और कोई नहीं है। शरत चंद्र चाहते थे कि तमाम भारतीय एक साथ कंधे से कंधा मिलाकर जन आंदोलन में भाग लें। जब तक देशवासी धार्मिक संक्रीणता के विचार से मुक्त नहीं होंगे, तब तक वे सही रूप से क्रांतिकारी नहीं बन पाएगें। श्रीकांत प्रथम भाग में शरत चन्द्र कहते हैं – ''सही तरह से गौर करने पर ''झूठ बोलकर'' या मिथ्या नामक कोई भी वस्तु इस ब्रहमांड में आपको दिखाई नहीं देगी''[4], कारण संपूर्ण विश्व ही सत्य का साकार स्वरूप है। झूठ या मिथ्या कुछ भी नहीं है। यह तो केवल लोगों को समझने और समझाने का तरीका है। मनुष्य की अज्ञानता ही उसको वास्तविकता से दूर ले जाती है और वह झूठ या मिथ्या का शिकार हाता है। श्रीकांत के चौथे अध्याय में शरत बाबू वैष्णव धर्म के मूल सार को प्रतिपादित करते हुए कहते हैं –

सबार ऊपरे मानुष सत्तो,
ताहार ऊपर नाई।

विवेकानंद का कथन है – ''जीबे प्रेम करे जेइ जन सेई जन सेबिम्मे ईश्वर''। (अर्थात जो व्यक्ति जीव से प्रेम करता है, वही ईश्वर की सेवा करता है।)

''गृह दान'' उपन्यास में शरत चन्द्र ने आधुनिक नारी जीवन की समस्याओं को रेखांकित किया है। शरत चन्द्र आधुनिकता के पक्षधर थे, पर उस समय आधुनिकता के नाम पर एक उग्रता पनप रही थी। वे इसे भलीभाँति जान गए थे। वे नारी शिक्षा एवं नारी स्वाधीनता के पुरोधा थे। वे नवजागरण को

व्यापक रूप से चाहते थे, पर भरात में नवजागरण केवल किताबों और नारेबाजी तक ही सीमित रहा। जिसके चलते गणतंत्र, व्यक्ति स्वाधीनता, नारी स्वाधीनता केवल एक बहस बनकर रह गया, रूपायन नहीं हो सका। मूल्यबोध हीनता, आर तथाकथित आधुनिकता को वे धार्मिकता के रूप में देखते हैं।

आज के तथाकथित आधुनिकताबोध के समाज जो अपने आप को अति सभ्य मानता है, वास्तव में वो समाज पशु से भी बदतर हैं। आज का आधुनिक शिक्षित समाज केवल भौतिक सुख भोग, विलासिता, सॉज–सवार और दिखावे का अधिकारी है। सामाजिक मूल्यबोध, कर्तव्यबोध से लाखों कोस दूर है। अगर किसी समाज के अंदर कर्तव्यबोध या मूल्यबोध बचा है तो वह ग्रामीणों के अंदर जो या तो अशिक्षित हैं या अल्प–शिक्षित, जो परंपरागत गांव के निवासी हैं।

शरत चन्द्र अपने एक कहानी 'अनुराधा' में इसे दिखाते हैं। शरत बाबू ने शहरी लोगों के अंदर नैतिकता या भाईचारा नहीं होता कारण ये उस पेड़ की तरह हैं, जिसकी जड़ नहीं है। शहर के धनी, शिक्षित लोगों के परिवारों में पारस्परिक संपर्क ठीक नहीं रहता है। यहां के लोगों की हालत भी पेड़ के उस पत्ते के समान है जो हरा होते है, पीला हो जाता है। यानी भारत में आधुनिक शिक्षा तो आई है पर यथाथ रूप से सुसंस्कृति को नहीं ला पाई यह आधुनिक शिक्षा।

'अनुराधा' की कथा इस प्रकार है– गांव से जमींदारी प्रथा निलाम हो गई है। जमींदार का एक प्रजा कोलकाता में व्यापार करता है। वह जमींदारी को खरीद लिया है। पहले जिसकी जमींदारी थी, उसका बेटा गगन अब नायब का काम करता है, जो वसूल की गई कर की राशि को लेकर भाग जाता है। गगन की कुआरी एवं वयस्क बहन अनुराधा अपनी एक बहन की बेटे को लेकर उसी जमींदार के एक टूटी–फूटी कोठरी में जीवन जी रही है। अभी जो जमींदार है, वह कोलकाता से अपने छोटा बेटा विजय को, जिसकी माँ का देहांत हो गया है, लेकर गाँव आता है। गगन को खोजकर निकालना है और अनुराधा को बेदखल करके घर पर कब्जा करना ही मुख्य कारण है। मैं यहा पर आधुनिकता के नकाब को उजागर करने के लिए आपको बता रहा हूँ – वह मातृहीन लड़के को अनुराधा अपनी बहन के बेटे की तरह लाड़–प्यार करती है। जब विजय कोलकाता लौटने लगता है तब वह बच्चा विजय के साथ नहीं जाना चाहता है। अनुराधा को जकड़े रहता है। अनुराधा को आश्चर्य होता है। वह विजय से पूंछती है कि यह बालक कोलकाता के घर में वापस क्यों नहीं जाना चाहता है ? तब विजय उत्तर देते हुए कहता है–जो लाड़–प्यार इसे आपके पास मिला कोलकाता में नहीं मिलेगा, अनुराधा कहती है, सुनी हूँ इसकी विमाता शीघ्र आने वाली है, वो बी.ए पास है। विजय कहता है उसकी काका भी बी.ए पास है। किन्तु बी.ए कोर्स के पाठयक्रम में सौतन के बेटे या किसी अन्य के बेटे को देख–रेख करने का विषय नहीं है। अनुराधा फिर पूंछती है, बूढ़े सास–ससुर की सेवा करने का ? विजय का उत्तर ये तो और भी चिंता का विषय। अनुराधा कहती है इस तरह की माँ को आप कैसे सन्तान सौंप सकते हैं ? विजय अंत में कहता है– ''मैं अपने परिवार की ओर से कहता हूँ, हमारे समाज में बी.ए पास पत्नी न होने पर मन नहीं भरेगा। घर भी नहीं चलेगा, मान भी नहीं रहेगा। ये है आधुनिक शिक्षा।''[5]

एक ही प्रश्न को फिर शरत चन्द्र ने 'गृहदाह' में उठाया है।

कारण जिस प्रकार से आधुनिक शिक्षा, आंदोलन, मनुष्य को परोपकारी, निःस्वार्थ, उदार, कर्तव्यनिष्ठ, मातृ–पितृ स्नेह, सामाजिक जिम्मेदारी आदि को जागृत करना था, नहीं कर सका भारत में। आधुनिक शिक्षा से भारत में मूल्यहीनता और स्वार्थवृत्ति पनपी है। शहरी लोगों में आधुनिक शिक्षा से शिक्षित लोग केवल दिखावे, ठाठ–बाट है। न तो ममता है, न स्नेह है, न कर्तव्यबोध है। शरत चन्द्र के समय जो संकट था, आज वही संकट भारत में भयंकर रूप ले लिया है।

आज के भूमंडलीय संस्कृति या बाजारवाद के चलते प्रभाव से भारतीय संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति हावी होती गई है। आज के रोजगारी युवा, बड़े–बड़े बहुमंजिले भवन बनवा रहे हैं। देश–विदेश के होटलों में मौज–मस्ती कर रहे हैं। दूसरी ओर वृद्ध माँ–बाप को घर से निकाल कर वृद्धाश्रम भेज रहे हैं।

विद्यासागर ने विधवा विवाह का समर्थन किया पर शरत चन्द्र के किसी भी उपन्यास या कहानी में विधवा विवाह का उल्लेख नहीं है। इस विषय में मैं आपको शरत चन्द्र के एक भाषण से बता रहा हूँ –

''विधवा विवाह खराब है। हिन्दुओं की यह संस्कार है। कथा या उपन्यास में काई भी लेखक किसी विधवा हिंदू की शादी कराकर, हिंदू जनता के समझ निष्ठावान नहीं हो सकते विद्यासागर जब सरकारी सहयोग से विधवा अधिनियम लागू करवाए, तब वे शास्त्रीय के विचार से किए थे। हिन्दुओं की मन/आत्मा के विचार से नहीं। इसलिए कानून तो पास हो गया, लेकिन हिन्दू समाज ने इस कानून को स्वीकार नहीं किया। विद्यासागर की इतनी बड़ी योजना विफल हो गई। गाली, बदनामी और तरह–तरह की बातें विद्यासागर को सुननी पड़ी। पर उस समय के कोई भी साहित्यकार विद्यासागर के इस पथ को स्वीकार नहीं किया।[6]

(साहित्य आर्ट ओ दुनिर्ती)

''शष प्रश्नों'' उपन्यास शरत चन्द्र के जीवन के अंतिम समय की रचना है। इस उपन्यास के जरिए शरत चन्द्र आधुनिकता के नाम पर परोसे जा रहे नंगेपन की ओर हमारे ध्यान को ले जाते हैं। उस समय कुछ युवा साहित्यकार लेखन के नाम पर पोनोग्राफी की चर्चा शुरू किए थे। शरत चन्द्र उन तमाम युवा लेखकों के लिए आधुनिकता और आधुनिक साहित्य की एक रूपरेखा (Guide Line) पेश करते हैं। उपन्यास के शिल्प संरचना और दर्शन को कायम रखते हुए। इस उपन्यास में मुख्य चरित्र के रूप में दो जन हैं। एक तरफ प्रौढ़ आशुतोष बाबू और दूसरी ओर तरुणी कमल। आशुतोष बाबू उच्च शिक्षित, देश–विदेश का भ्रमण करके आए हैं। उदार, सभ्य, कुसंस्काररहित, सहनशील, स्नेहपरायण होते हुए भी भारतीय शास्वत संस्कार के प्रति चरम विश्वसनीय हैं। कमल को प्रचलित परंपरागत शिक्षा न मिलने पर भी वह

प्रत्यक्षज्ञानी, वैज्ञानिक दृष्टिकोण संपन्न, तार्किक है। वह इहलौकिक और शास्वत सत्य को नहीं मानती है। कमल आत्ममर्यादा बोध को अधिक महत्व देती है। सम्पूर्ण उपन्यास में दो विपरीत विचार दर्शन हमें परिलक्षित होते दिखाई पड़ते हैं। पर जिस प्रकार आशुतोष बाबू के मन में कमल कि प्रति स्नेह है, वैसे ही कमल के अंदर आशुतोष बाबू के प्रति पृत स्नेह है।

प्यार शास्वत नहीं होता है। प्यार भी परिवर्तनशील है। इस बात को प्रमाणित करने के लिए कमल उपन्यास के प्रारम्भ में कहती है –

''एक दिन जिससे प्यार किया, किसी भी कारणवश उसे नहीं बदला जा सकता, मन के इस अचल अनड़ जड़ धम स्वस्थ नहीं, सुंदर भी नहीं।''[7]

आशुतोष बाबू यौवनावस्था में पत्नी को खो देते हैं। आशुतोष बाबू का पत्नी प्रेम समाज के समझ एक आदर्श है। पर कमल की मत विपरीत है। वह कहता है – ''एक दिन आशुतोष बाबू ने अपनी पत्नी से प्रेम किया था, पर आज वह जीवित नहीं है। अब आशुतोष बाबू के पास पत्नी को न कुछ देने को है और न तो कुछ पत्नी से पाना है, कारण वो मर गई है। न तो अब आशुतोष बाबू उसको सुख दे सकते हैं और न दुःख। उनका प्यार खत्म हो चुका है। केवल पत्नी के साथ बिताए पल और प्यार केवल एक याद है।'' अतः अतीत को स्मरण करके अपने वर्तमान को दुःखद बनाकर जीने में उनको क्या आनंद या आदर्श मिलता है, यह बात मुझे समझ में नहीं आती।

इस आधुनिकतावादी कमल को आशुतोष बाबू जब कहते हैं कि –''कमल हमारे देश की विधवाओं को देखो। उनके लिए तो यही अतीत की यादें ही सबकुछ हैं। पति नहीं रहे पर पति की याद तो नहीं जाती। क्या तुम इसे नहीं मानते ?'' कमल जबाब नहीं दे पाती है।[8]

इस उपन्यास में बेला के माध्यम से शरत बाबू ने समाज में अति आधुनिकता की गंदी प्रचलन को दिखाते हैं। बेला आधुनिक शिक्षित नारी है। उसके पति एक दुष्चरित्र आदमी है। जिसके कारण बेला पति से दूर रहती है। पर भोग–विलास की सामग्री के लिए बेला अपने पति से पैसे लेती है। तब उसके आत्म–सम्मान में चोट नहीं लगती है।

कमल कहती है –"प्रेम के बगैर शादी का कोई औचित्य नहीं। वैवाहिक जीवन का मुख्य स्थल है पारस्परिक प्रेम, श्रद्धा , ममता, त्याग। अगर ये सब नहीं है तो केवल दिखावे के लिए समाज के सामने बारात लाकर, लोगों को खाना खिलाकर शादी करा देने से वो शादी की सार्थकता नहीं रहती है। यह Live together का स्तर नहीं है। Live together में न तो श्रद्धा है न प्रेम। कारण यहां पर नारी–नर कोई भी सांसारिक जीवन की जिम्मेदारी नहीं लेना चाहते हैं। वे केवल भौतिक और दैहिक सुख के लिए एकत्र होते हैं। कमल वैवाहिक जीवन की सभी जिम्मेदारी को लेने के लिए तैयार है। कमल के यहाँ दैहिक चाह या आकषर्ण के पीछे मुख्य कारण प्रेम, श्रद्धा, स्नेह और ममता है।"[9]

कमल के माध्यम से शरत बाबू दिखाना चाहते हैं कि विश्वास, प्रेम, श्रद्धा और पारस्परिक मेल ही विवाह/वैवाहिक जीवन का प्राण है। केवल अनुष्ठान नहीं। यह उपन्यास शरत बाबू ने अपने जीवन के अंतिम दौर में लिखा है। इसके लिखने के पीछे विशेष कारण ह आधुनिकता के नाम पर साहित्य में पनप रही कामुकता पर रोक लगाना। अपसंस्कृति से समाज को बचाने हेतु। शरत बाबू साफ शब्दों में घोषणा करते हैं –

''प्राचीन रूढ़िवाद को तोड़कर, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, युक्तिवाद, जनवादी, मानवतावादी दृष्टिकोण को बढ़ावा देना हो सही मायने में आधुनिकता है।''[10] साहित्य में अश्लीलता को देखकर शरत बाबू काफी दुखित हुए थे।

Art (कला) मनुष्य द्वारा निर्मित होती है, पर प्रकृति नहीं। घर में जो भी घटता है, वह सब साहित्य का उपादान नहीं है। प्रकृति को आप नकल कर सकते हैं, पर वह नकल ही कहा जाएगा। रोज समाचार पत्रों में अनेक प्रकार के उत्तेजक कामुकता को बढ़ावा देने वाले समाचार प्रकाशित होते हैं, पर क्या वे साहित्य हैं ?

नारी स्वाधीनता के विषय में शरत चन्द्र का विचार देखने योग्य है। वे धार्मिकता को ही नारी मुक्ति में बाधा मानते हैं– जो धर्म की बुनियाद ही आदीम जननी इसकी पाप के ऊपर खड़ी है, जिस धर्म ने समाज के सभी कलह का कारण नारी को माना है, जिस धर्म ने इसी को सत्य मासनकर अपने अंदर बैठा लिया है, उस धर्म के लोगों में साहस नहीं कि वे नारी जाति को सम्मान की नजर से देखें।[11]

फिर आगे कहते है जब कोई नियम संसार में लागू होता है तो अचानक नहीं होता है। एक लंबी प्रक्रिया से होता है। जो इस नियम को लागू करते हैं वे मर्द होते हैं। वे इसे अपने अधिकार के लिए लागू करते हैं। तब वे पुरुष होते, न किसी के बाप, न भाई, न पति। वे केवल अधिक से अधिक नारी के पास से लेना चाहते हैं। अपने अधिकारों को लागू करने के लिए उपाय निकालते फिरते हैं। फिर मनु आते हैं और श्लोक रचते हैं और शास्त्र का निमार्ण करते हैं। जब स्वार्थ धर्म बन जाता है तो धर्म को सामने रखकर अपने स्वार्थ को प्राप्त करने के लिए सत्ता कायम रखने के लिए नारी को न मुक्त होते देना ही लक्ष्य रहता है। इला चन्द्र जोशी के पत्र के जबाव में शरत बाबू लिखे थे– ''मैं ऐसी अनेक स्त्रियों को जानता हूँ जिनका कभी भी गैर मर्दों के साथ शारीरिक या मानसिक सम्पर्क नहीं रहा है। फिर भी वे अपने आचरण से, स्वभावगत दृष्टि से अतिहीन, नीच, घोर संकीर्ण, स्वार्थी एवं झगडालू हैं और ठीक इसके विपरीत बहुत सारे पतिताओं को भी जानता हूँ, जो मन से साफ, मातृहृदय सम्पन्न, निस्वार्थ, करुणा की मूर्ति भी हैं।''[12]

शरत चन्द्र इसलिए कहते हैं– ''परिपूर्ण मनुष्यता सतीत्व से श्रेष्ठ है। एवं मानव धर्म सती धर्म से बड़ा है, यह मैं मानता हूँ। सतीत्व और नारीत्व दोना का आदर्श एक नहीं हो सकता।''[13]

विश्व कवि रविन्द्र नाथ टैगोर ने भी शरत चन्द्र और उनके समसामयिक लेखकों के साहित्य सृजन के बार में अपना विचार व्यक्त किया है। ''उपन्यास साहित्येर सेई दशा मानूषेर प्राणेर रूप चिन्तार स्तूपे चापा पड़ेछे'' अर्थात Intelleatualism के बढ़ते दबाव के कारण साहित्य मनुष्य के मन प्राण को दबा रहा है। इसके जवाब में शरत चन्द्र कहते हैं– उपन्यास साहित्य की ये दशा नहीं है। यह

मानव के प्राण स्वरूप के चिन्ता को ढका नहीं, बल्कि मानव क चिंता का ज्ञानोदय हो रहा है। रविन्द्र नाथ का शरत चन्द्र से इस बात को लेकर मतभेद था कि साहित्य में वैज्ञानिक विचार रहे या न रहे। रविन्द्र नाथ साहित्य में वैज्ञानिक विचार या चिन्ता के विरोधी थे। वे श्साहित्य धर्मश नामक निबंध में लिखते हैं – ''विज्ञान विस्तार हो उठा है और वह किसी सीमा को या दायरा को स्वीकार नहीं करना चाहता है। इसका प्रभाव मानव मन को अधिक अपेक्षित किया है। वह नये–नये रूप से अनाधिकार रूप में प्रवेश करता है और यह कौतुहल बस आज के वर्तमान साहित्य को भी अपनी चपेट में ले रहा है। इसका जवाब शरत बाबू अपन निबंध 'साहित्येर रीति और नीति' से देते हैं। ''विज्ञान के प्रति साधारणतः कवि लोग विमुख रहते हैं, पर वैज्ञानिक क्षेत्र का अर्थ क्या है, यह मैं नहीं समझा।''

अगर विज्ञान का अर्थ केवल Sex-Psychology (काम मनोविज्ञान), Anatomy, Gynaecology है तो मैं साहित्य में इसका प्रवेश को निषेध मानता हूँ, कारण साहित्य में इसका प्रयोग तब पूर्णतः निषेध है मैं मानता हूँ।

आज जब समाज का युवा वर्ग दिशाहीन होकर भटकता नजर आ रहा है, तो हमें शरत चन्द्र की बातें याद आती हैं। मूल्यबोध और नैतिकता के बारे में वे विशेषकर छात्र और युवा समाज को उत्साहित करते हुए कहते हैं अपने निबंध 'स्वदेश ओ साहित्य' में Right और Duty दोनों एक दूसरे के परिपूरक शब्द हैं तथा सभी नियमों पर लागू होते हैं। कर्तव्यहीन अधिकार भी अनाधिकार के समान है। जब कोई हमें अपशब्द कहता है या बुरा आचरण करता है तो हमें दुःख होता है, पर यह बात सही नहीं है। वे अपने भाषण 'आमार कथा' (मेरी बात) में लिखते हैं – ''जो सम्मानित वस्तु या व्यक्ति को अपमानित करते हैं या व्यंग्य करते हैं वास्तव में वही अपमानित या लज्जित होते हैं। किसी भी कारण अगर आपके जीवन में दुःख आता है तो इससे हताश होने की जरूरत नहीं है। बल्कि उससे सीख लेने की जरूरत है। दुःख पर विजय प्राप्त करना ही सुख है। इसी बात को 'श्रीकान्त' उपन्यास में उल्लेख करते हैं ''दुःख अभाव का कारण नहीं है। शून्य भी नहीं। डर रहित दुःख को हमें सख की तरह उपभोग करना चाहिए।''[14] कोई व्यक्ति उत्तेजनावश जब कुछ बोल देता है, जो बात स्वभाविक नहीं होती है पर अगर हम उसी बात को पकड़ कर यदि उस व्यक्ति का मूल्यांकन करते हैं तो हम गलत करते हैं। कारण वह उस व्यक्ति का मुख्य रूप नहीं है। इसी बात को आगे वे गृहदाह में कहते हैं – ''मनुष्य तो देवता नहीं है। वह मानव है और मानव देह में दोष–गुण दोनों है। अतः किसी व्यक्ति के उत्तेजनावश की बात को उसका स्वभाव मानकर उसकी समालोचना आलोचना करना गलत है।''[15]

मूल्यबोध को याद दिलाते हुए कहते हैं किसी के दुःख–वेदना का उपहार नहीं करना चाहिए। श्रीकान्त में कहते हैं– ''जब एक व्यक्ति की मार्मिक वेदना दूसरे की मनोरंजन या उपभोग की वस्तु बन जाती है तब इससे बढ़कर दुखांत (Tradgey) कुछ भी नहीं होता है। जिस प्रकार कोई भी सामाजिक आन्दोलन की जिम्मेदारी पालन करते वक्त जब हम कहते हैं कि मैं अकेला क्या कर सकता हूँ, इस बात पर शरत बाबू अपने लेख ''स्वराज साधनाए नारी'' के जरिए बताते हैं – पृथ्वी पर कोई भी संस्कार कभी भी दलबद्ध होकर नहीं होता। अकेले ही शुरू करना पड़ता है। इससे दुःख होता है, पर इस दुःख का फल जब आपसे अनुप्रेणित होकर लोग दलबंद्ध होते हैं, तब जनकल्याण होता है।[16]

छात्र और युवाओं के उद्देश्य से कहते हैं–"मिथ्या को कभी भी छल से भी स्वीकार मत करना। सत्य का पथ कठिन है, पर इसी पथ पर चलना चाहिए। इससे देश का और आपका भला होगा।"[17]

एक समय था जब हमारे समाज में, घर में, स्कूलों में राजा राम मोहन राय, विद्यासागर, शरत चन्द्र, नजरूल, देशबंधु, भगत सिंह, गाँधी जी, नेताजी, लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक, खुदीराम बोस के बारे में विचार दृ विमर्श होता था। छात्र आसैर युवा समाज इनको अपना आदर्श मानकर स्वयं को गढ़ने की कोशिश करते थे, पर आज की भूमंडलीकृत संस्कृति ने हमें आदर्श से लाखों कोस दूर भेज दिया है। शरत बाबू ने श्रीकान्त, देहाती दुनिया, में जिस समस्या को दिखाया है, वह आज और अधिक बढ़ गई है। आज की भयानक सांस्कृतिक संकट को वे नहीं देखे हैं। वे नहीं देखे है कि आज माँ – बाप अपने बच्चा को बेच रहे हैं। वे नहीं देखे है कि शादी के नाम पर धोखा देकर फिर पत्नी को बेच देना। वे नहीं देखे हैं कि रोगी पत्नी, भूखे संतान का पेट भरने के लिए घर की औरतों का अंधेरी रात में रास्ते पर उतरना, आज महिलाएं राह चलते डरती हैं। अश्लील शब्दों का प्रयोग, बलात्कार, हत्या, यौन शोषण बच्चों का, वृद्ध महिलाओं से बलात्कार, माँ – बाप को घर से निकाल देना, माँ–बाप की संपत्ति हेतु हत्या आदि, पर जिस समाज को शरत बाबू ने देखा था, उसकी प्रासंगिकता आज भी है। आज भी पूँजीवादी शोषण का बाजार कायम है।

संदर्भ सूची

1. शरतचन्द्र के 51वें जयन्ती पर रवीन्द्र का भाषण
2. शरत रचनावली– पेज– 15, साहित्य प्रकाशन–2002 कोलकाता
3. पथेरदाबी– शरतचन्द्र–64, कमला प्रकाशन–2002 कोलकाता
4. शरत रचनावली– पेज– 402
5. शरत रचनावली– पेज– 195
6. शरत रचनावली– पेज– 356
7. शरत रचनावली– पेज– 401
8. शरत रचनावली– पेज– 167
9. शरत रचनावली– पेज– 209
10. शरत रचनावली– पेज– 216
11. शरत रचनावली– पेज– 219
12. शरत रचनावली– पेज– 446
13. शरत रचनावली– पेज– 449
14. शरत रचनावली– पेज– 526
15. शरत रचनावली– पेज– 429
16. शरत रचनावली– पेज– 160
17. शरत रचनावली– पेज– 146